राजगुरु रत्नाकर पौण्डरीक (महाशब्दे)

जयप्रकाश शर्मा
पाण्डुलिपि एवं लिपि विशेषज्ञ
उपनिदेशक - पद्मश्री नारायण दास संग्रहालय एवं पाण्डुलिपि शोध संस्थान, जयपुर

जयपुर के इतिहास ने जिन संस्कृत विद्वानों को शिखर महत्त्व का यश देकर अपना शिरोभूषण बना लिया है उनकी अग्रणी पंक्ति में दो नाम ऐसे आते हैं जो जयपुर बसने के साथ ही अमर हो गये। ये नाम हैं राजगुरु रत्नाकर पौण्डरीक और जगन्नाथ सम्राट । ये दोनों सवाई जयसिंह के राजगुरु थे, जयपुर निर्माण के प्रत्यक्षदर्शी थे और जयसिंह के सर्वोच्च आदर के पात्र होने के कारण जनजीवन के अभिन्न अंग बन गये थे। तभी तो इनका नाम जयपुर के नाम के साथ इतिहास से जुड़ गया है। सम्राट जी की हवेली और पुण्डरीक जी का बाग ब्रह्मपुरी में उस इतिहास के अवशेष हैं। पुरानी पीढ़ी को आज भी इन दोनों राजगुरुओं की अनेक किवंदितियाँ याद हैं। ये दोनों विद्वान् जयपुर बसने के प्रत्यक्षदर्शी विद्वानों की अग्र-पंक्ति में स्मरणीय होने के साथ-साथ संस्कृत के इतिहास में भी स्मरणीय हैं।

वेद, धर्मशास्त्र, तंत्रशास्त्र तथा विभिन्न विधाओं के ज्ञाता रत्नाकर दीक्षित महाराष्ट्र के महाशब्दे परिवार में जन्मे थे और सवाई जयसिंह द्वारा काशी से लाये गये थे। वैसे महाशब्दे परिवार देश का प्रसिद्ध परिवार होने के कारण पहले से ही आमेर के राजाओं द्वारा सम्मानित था। रामसिंह प्रथम देवभट्ट महाशब्दे का आदर करते थे किन्तु यह परिवार आमेर मे आकर नहीं बसा था। देवभट्ट का चौथा पुत्र रत्नाकर अद्भुत प्रतिभाशाली था। कहते हैं देवभट्ट की बड़ी बहन तंत्र शास्त्र की विदुषी और साधिका थीं तथा उन्हें चमत्कारी सिद्धियाँ प्राप्त थी। रत्नाकर को इनका स्नेह प्राप्त था। उन्होंने दीक्षा देकर रत्नाकर को तन्त्र का साधक भी बना दिया था। काशी में अपनी छोटी उम्र में ही जयसिंह ने इन्हें ध्यानमग्न देखा तो वे इनसे बहुत प्रभावित हुए। इनकी अवस्था भी अधिक नहीं थी। जयसिंह ने आग्रहपूर्वक रत्नाकर को आमेर में लाकर बसाया। नृसिंह जी के मन्दिर के पास एक हवेली उन्हें दी जो आज भी पुण्डरीक जी की हवेली कहलाती है। जयपुर उस समय तक नहीं बसा था। जब जयसिंह गद्दी पर बैठा तो उसने सभी वैदिक यज्ञ कर डालने की ठान ली। इन यज्ञों में अश्वमेध यज्ञ, राजसूय और वाजपेय बहुत प्रसिद्ध है जो अत्यन्त समृद्ध द्विजों, राजाओं या चक्रवर्तियों के ही करने के होते थे। वाजपेय या तो ब्राह्मण कर सकता है या क्षत्रिय। जयसिंह इन्हें करना चाहता था। कहते हैं उसका यज्ञोपवीत विधिवत नहीं होने के कारण वह वाजपेय नहीं कर सकता था क्योंकि वाजपेय सुसंस्कृत और विधिवत् उपनीत अत्यन्त समृद्ध ब्राह्मण या क्षत्रिय ही कर सकता था। जयसिंह का यज्ञोपवीत विधिवत उज्जैन में करवाया गया था किन्तु उससे पूर्व ही उसने रत्नाकर को गुरु बनाकर इतनी भू-सम्पत्ति और धन-सम्पत्ति उन्हें दे दी कि वे स्वयं राजा के समान समृद्ध हो गये। तब उनसे जयसिंह ने वाजपेय यज्ञ बड़ी धूमधाम से करवाया। यह यज्ञ श्याम बाग में (आमेर) हुआ जिसे आज परियों का बाग कहते हैं। संवत् 1765 में हुए इस यज्ञ के

समय जयसिंह 20 वर्ष के ही थे। इस यज्ञ का विस्तृत वर्णन राम विलास, जयसिह चरित, गुणदूत आदि अनेक काव्यों में मिलता है। इसके बाद रत्नाकर से पुण्डरीक यज्ञ करवाया गया। तभी से ये पौण्डरीक नाम से विख्यात हो गये। ये हो रत्नाकर महाशब्दे जयपुर की नींव रखे जाने के समय भी आचार्य थे और अश्वमेध यज्ञ के समय भी। अश्वमेध यज्ञ सवाई जयसिंह ने स्वयं किया जिससे उसकी ख्याति देश-देशान्तर में फैली। इस अवसर पर भी अपने गुरु रत्नाकर को जयसिंह ने बहुत बड़ी जागीर दी।

रत्नाकर जी के चमत्कारों के बारे में अनेक जनश्रुतियाँ प्रचलित हैं। कहा जाता है कि जब नाहरगढ़ बन रहा था तो वहाँ आत्मा के रूप में स्व. नाहर सिंह भौमिया रहता था। वह अपने स्थान पर किला बनना पसन्द नहीं करता था तभी तो ज्यों ही एक दीवार बनती, रातों रात नष्ट हो जाती। इस समस्या के समाधान के लिए पुण्डरीक जी से प्रार्थना की गई उन्होंने अपनी साधना से मालूम कर लिया कि भौमिया नाहर सिंह का ही यह चमत्कार है। उन्होंने तंत्र विद्या से उसे प्रसन्न किया और कहा कि वे कृपा कर और कहीं जा बसें। इस पर नाहर सिंह ने इस शर्त पर वहाँ से हटने की बात मानी कि किला जो सुदर्शन गढ़ नाम से बनवाया जा रहा है वह उनके नाम पर नाहरगढ़ कहा जाय, उनके लिए अलग मन्दिर बनाया जाय, उसके बनने तक वे स्वयं पुण्डरीक जी के साथ रहेंगे जहाँ सदा उनकी सेवा होती रहेगी। ये सभी शर्तें मान ली गई। उनके लिए पुराने घाट की गूनी पर आमागढ़ के नीचे मन्दिर बनवाया गया। आज भी इनकी छतरियाँ नाहरगढ़ मैं, पुण्डरीक जी के बाग में और पुराना घाट की गूनी के पास स्थित हैं। ऐसी कथाएँ भी प्रचलित हैं कि राजा को जब भी कोई समस्या होती थी वह स्वयं इनके पास जाता था और महलों में वापिस लौटने से पूर्व ही वह समस्या हल हुई मिलती थी। कहते हैं जयसिंह इनका इतना आदर करता था कि वह अपने आपको इनका पुत्र मानता था। आयु में अधिक अन्तर नहीं होते हुए भी उसने पुत्र के कर्तव्य निभाये थे। बाद में किन्हीं कारणों से पुण्डरीक जी जयपुर छोड़ गये थे। कहते हैं कि ये बूंदी या करौली जाकर बस गये थे। उनकी मृत्यु के बाद जयसिंह ने पुत्र धर्म को पूर्णता देते हुए उनकी सम्पत्ति में से एक हिस्सा भी लिया था। उनके चार पुत्र थे। जयसिंह ने पांचवाँ पुत्र बनकर पाँचवां हिस्सा बंटाया किन्तु उसमें अपनी ओर से पर्याप्त धन मिलाकर अपने गुरु के नाम से जयगढ़ में रत्नाकर सागर बनवाया। यह तालाब आज भी उनकी याद दिलाता है। रत्नाकर महाशब्दे के नाम पर एक ग्रंथ बहुत प्रसिद्ध हुआ है जिसका नाम है "जयसिंह कल्पद्रुम" । इसमें राजा के (अन्य गृहस्थों के भी) करने योग्य सभी श्रौत और स्मार्त धर्म कार्यों की विषि, व्यवस्था और निर्णय बताये गये हैं। धर्मशास्त्र का यह प्रन्थ राजा के लिए पुण्डरीक जी ने सब शास्त्रों का मंथन करके लिखा था जो प्रकाशित है। धर्मशास्त्र का अपनी ओर से संग्रह ग्रन्थ लिखवाने की यह परम्परा बड़े-बड़े राजाओं ने अपना रखी थी। मध्यप्रदेश के सुप्रथित राजा वीरसिंह जू देव के नाम पर जिस प्रकार 'वीर मित्रोदय' प्रसिद्ध हैं उसी प्रकार जयसिंह कत्पद्रुम भी जयपुर का प्रमुख धर्मग्रन्थ है। सुनते हैं बीकानेर के राजा गंगासिंह ने भी इसी परिपाटी पर 'गंगासिंह कल्पद्रुम' लिखवाया था। जयसिंह के नवरत्नों में प्रमुख रत्नाकर पौण्डरीक जयपुर के इतिहास में अमर हो गये हैं। तभी तो पुण्डरीक जी और सम्म्राट जी के स्मरण के बिना जयपुर का इतिहास पूरा नहीं हो सकता।